राष्ट्रवाद और भारतीय शिक्षा से
भगत सिंह का मतलब

अमन मदान

अनुवादः रविकान्त

दोस्तो, हम यहां पर भारत की आजादी के एक बड़े लड़ाके भगत सिंह की याद में इकट्ठा हुए हैं। लेकिन भगत सिंह के बारे में कुछ बोलने से पहले मैं दूसरे दो बड़े व महान भारतीयों को याद करना चाहता हूं। उनमें से पहली भारतीय, सुधा भारद्वाज, आज भी हमारे बीच में मौजूद हैं। सुधा भारद्वाज ने आई.आई.टी. कानपुर से स्नातक किया और पिछले तीस बरसों से वे कामगारों व किसानों के हकों के लिए एक वकील के तौर पर लड़ रही हैं। पिछले साल सुधा भारद्वाज इसी भगत सिंह यादगार व्याख्यानमाला में वक्ता थीं। अपने व्याख्यान के कुछ ही महीनों बाद उन्हें दिल्ली में गिरफ्तार कर लिया गया। इस वक्त वे माओवादी आतंकवादी होने के आरोप में पूना की जेल में बंद हैं। इस देश के दूसरे व्यक्तियों की ही तरह, पिछले बरस उनका व्याख्यान सुनने के बाद, मेरे लिए भी उन पर लगाए गए आरोप पर यकीन करना काफी मुश्किल काम है। मैं उम्मीद करता हूं कि हमारी न्याय व्यवस्था सच्चाई से झूंठ को अलग कर पाएगी।

भगत सिंह के बारे में बात करने से पहले हमें एक दूसरे बड़े व महान भारतीय बी.आर.अंबेडकर को जरूर याद करना चाहिए। अंबेडकर निःसंदेह बीसवीं सदी के पहले आधे हिस्से के महानतम बौद्धिकों में एक थे। उन्हें याद करना इसलिए भी जरूरी है क्योंकि उन्होंने हमें नायक पूजा के खिलाफ चेताया था। भगत सिंह के बारे में बात करते वक्त हमें यह सावधानी जरूर बरतनी चाहिए। भगत सिंह खुद भी नायक पूजा के खिलाफ थे और गांधी, नेहरू, तिलक या उस वक्त के किसी भी दूसरे महान नेताओं की मूर्ति बना कर उन्हें पूजने से इंकार करते थे। अंबेडकर ने हमें बेहद ही खूबसूरत तरीके से नायक पूजा के खिलाफ चेताया थाः

> ''किसी के प्रति अटूट अनुराग के प्रदर्शन के तौर पर नायक-पूजा एक बात है। नायक का आज्ञापालन एक दूसरी किस्म का नायक-पूजन है। पहले में कुछ भी गलत नहीं है जबकि दूसरा बिना किसी शक के सबसे नुकसानदेह चीज है। ...पहला किसी की भी सोचने समझने की ताकत तथा कर्म करने की आजादी को नहीं छीनता है। दूसरा किसी को भी पक्के-मूर्ख में तब्दील कर देता है।''
>
> - अंबेडकर, बी. आर. (1989)।

हम भगत सिंह को नायक पूजा की नजर से नहीं देखेंगे, बल्कि जैसा कि अंबेडकर कहते हैं, हम उन चीजों की तलाश में उन्हें देखेंगे, जो कि मानवता में महान हैं। उसमें जो हमें बेहतर लगेगा, हम उसकी तारीफ करेंगे और जो बेहतर नहीं लगेगा, उससे हम कई गज दूर ही रहेंगे।

भगत सिंह 1907 में पंजाब के लायलपुर जिले में पैदा हुए थे, जिसे अब पाकिस्तान में फैसलाबाद के नाम से जाना जाता है। हम सभी भगत सिंह की कहानी जानते हैं। भगत सिंह, राजगुरू और दूसरे कई कामरेडों ने मिल कर लाला लाजपत राय की हत्या का बदला लेने की योजना बनाई थी। 30 अक्टूबर, 1928 को पुलिस सुपरिटेंडेंट जॉक स्कॉट द्वारा दिए गए लाठी चार्ज के आदेश में लाला लाजपत राय को चोट पहुंची थी। इसके बाद लाला लाजपत राय 17 नवंबर, 1928 को दिल के दौरे से गुजर गए। भगत सिंह और दूसरे कई व्यक्तियों

का यह मानना था कि उनकी मौत लाठी चार्ज की वजह से ही हुई थी। उसके ठीक एक महीने बाद, भगत सिंह और शिवराम हरि राजगुरू ने एक ऐसे आदमी पर हमला किया, जिसके बारे में उनमें से ही एक साथी ने यह बताया था कि वही सुपरिटेंडेंट स्कॉट है। लेकिन वह गलत था और उसके बजाय उन्होंने 17 दिसंबर, 1928 को सहायक पुलिस सुपरिटेंडेंट जॉन पोयेन्ट्ज सांडर्स (22 वर्ष) को मार दिया। अपनी मौत के वक्त सांडर्स को भारत आए एक बरस से भी कम वक्त हुआ था। यह माना जाता है कि चंद्रशेखर आजाद ने सांडर्स के सिख मुंशी चानन सिंह को मारा था, जो कि उनका पीछा कर रहा था। हालांकि यह हत्या ब्रिटिशों के खिलाफ जनता में विरोध को जगाने के इरादे से की कई थी, लेकिन ऐसा लगता है कि उस वक्त इसमें कामयाबी नहीं मिली। नौजवान भारत सभा में लोगों की उपस्थिति असल में गिर गई थी। यह तो बहुत बाद में, जब भगत सिंह जेल में थे, तब वे देश और खास तौर पर उत्तर भारत के लोगों के दिलो-दिमाग पर छाने लगे।

भगत सिंह और बटुकेश्वर दत्त ने 8 अप्रैल, 1929 को दिल्ली की विधान सभा में दो छोटे-छोटे बम फेंके। यह जानबूझ कर जनता में लोकप्रिय भावनाएं भड़काने के लिए किया गया था ताकि औपनिवेशिक राज के खिलाफ जनता उठ खड़ी हो। इस योजना को बनाने वालों के बीच इस बात पर थोड़ी चर्चा चली थी कि इस काम के लिए किसको जाना चाहिए और इस बात की उन्हें आशंका थी कि पुलिस शायद भगत सिंह को सांडर्स व चानन सिंह की हत्या में शामिल व्यक्यिों में से एक व्यक्ति के तौर पर पहचान सकती है। लेकिन भगत सिंह उनमें से सबसे अच्छे वक्ता तथा मुखर थे। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि अगर मुकदमे को ही सार्वजनिक लामबंदी की जगह बनाना है तो वे उसके लिए सबसे बेहतरीन व्यक्ति हैं।

उन्हें ब्रिटिश औपनिवेशिक शासकों द्वारा 23 मार्च, 1931 को फांसी की सजा दे दी गई। प्रतिरोध के एक वक्तव्य और भारत के लोगों को जगाने के एक जरिए के तौर पर, उनकी मौत खुद उनके द्वारा ही रची गई थी। भारत के गवर्नर को लिखी अपनी आखिरी चिट्ठी में उन्होंने, राजगुरू और सुखदेव ने व्यंग्य और विडंबना भरे शब्दों में यह मांग रखी थी कि उन्हें फांसी पर न लटका कर गोली से उड़ाया जाए।

> ''जहां तक हमारे भाग्य का सवाल है, तो कृपया हमें यह कहने की अनुमति दें कि जब आपने हमें मौत के घाट उतारने का फैसला कर ही लिया है, तो आप इस पर निश्चित रूप से अमल करेंगे ही। आपके हाथों में ताकत है और इस दुनिया में जिसके पास ताकत होती है उसे ही सही माना जाता है। हम जानते हैं कि आप 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' वाले मुहावरे पर पूरा यकीन करते हैं। कोर्ट में चला हमारा पूरा केस इस का सबूत है।
>
> हम इस बात की तरफ आपका ध्यान दिलाना चाहते हैं कि आपके कोर्ट के मुताबिक हमने आपके खिलाफ युद्ध छेड़ा था और इसलिए हम युद्धबंदी हैं और हम यह चाहते हैं कि हमारे साथ उसी तरह से बरताव किया जाए, जैसे हम चाहते हैं कि हमें फांसी पर चढ़ाने के बजाय गोली से उड़ा दिया जाए। अब यह साबित करना आपके ऊपर है कि आपका मतलब भी वही था जो आपकी अदालत ने कहा था।
>
> हम आपसे अनुरोध करते हैं और उम्मीद करते हैं कि आप अपने सैन्य विभाग को यह आदेश देंगे कि वे अपनी एक टोली भेज कर हमें गोली से उड़ा दें।''
>
> आपके, भगत सिंह, राजगुरू, सुखदेव

भगत सिंह की शिक्षा

मैं उस पत्र की जीवटता से दंग रह गया। वे अगले एक दो माह में ही फांसी पर चढ़ने वाले थे, इसके बावजूद वे अंग्रेजों से पंगेबाजी करने से बाज नहीं आ रहे थे। आखिर ऐसा क्या हुआ था, जिसने ऐसे इंसान को गढ़ा?

भगत सिंह राजनैतिक कार्यकर्ताओं के परिवार से आए थे। उनके पिता किशन सिंह क्रांतिकारी संगठनों की मदद करने में शामिल रहते थे और विभिन्न किस्म की सामाजिक सुधारवादी गतिविधियों से जुड़े रहते थे। उनके चाचा अजीत

सिंह ज्यादा आक्रामक तथा उग्र कामों में हिस्सेदार थे और उन्हें 1907 में मंडालय में लाला लाजपतराय के साथ जेल जाना पड़ा था। उनके यही चाचा ब्रिटिश कानूनों के खिलाफ विरोध प्रदर्शनों तथा किसानों की लामबंदी की मुहिमों में शामिल रहते थे। आखिरकार वे देश से गायब ही हो गए। भगत सिंह को गढ़ने में इस तरह के परिवार में पाए जाने वाले रोल मॉडल और उनसे मिलने वाली प्रेरणा का भी योगदान था।

जिस कॉलेज में भगत सिंह पढ़े वह भी कुछ गैर मामूली था और उसने भी भगत सिंह को गढ़ने में अपना बहुतेरा हाथ बंटाया होगा। शुरुआत में ग्रामीण परिवार में बड़े होने के बाद, उन्हें लाहौर में पढ़ने के लिए भेजा गया, जो कि उस वक्त पंजाब का जबरदस्त हलचल भरा महानगर था। आज जिसे हम 11वीं तथा 12वीं कक्षा कहते हैं, वह भी उस वक्त कॉलेज में होती थी। एक बरस डी.ए.वी. कॉलेज में बिताने के बाद वे एक अनूठे संस्थान में चले गए। भगत सिंह कुछ वक्त के लिए ''पंजाबी कौमी विद्यापीठ'' या लाहौर के नेशनल कॉलेज में पढ़े। यह आजादी के आंदोलन के हिस्से के रूप में स्थापित राष्ट्रीय कॉलेजों की एक श्रृंखला का ही एक हिस्सा था, जो लोगों को ब्रिटिश प्रायोजित शिक्षा छोड़ने के लिए आमंत्रित करता था। गांधी और दूसरे राष्ट्रीय नेताओं का मानना था कि ब्रिटिश तौर तरीकों वाली शिक्षा व्यक्तियों को सत्ता की भूलभुलैया में जज्ब कर लेती है। इसलिए उन्होंने युवाओं तथा अकादमिकों के लिए कई राष्ट्रीय स्तर के संस्थान स्थापित किए, जिसमें जामिया मिलिया, काशी विद्यापीठ और पंजाब कौमी विद्यापीठ भी शामिल थे। लाहौर नेशनल कॉलेज पर आर्य समाजियों जैसे भाई परमानंद और लाला लाजपत राय जैसों का जबरदस्त असर था। यहीं पर भगत सिंह अपने अध्यापकों जैसे, जयचंद्र विद्यालंकार से बहुत प्रेरित हुए, जिन्होंने उन्हें रूस की क्रांति और जार के खिलाफ लड़ाई में मिली कामयाबी के बारे में बताया। शिक्षार्थियों ने गैरीबाल्डी और मैजिनी जैसे क्रांतिकारियों के बारे में भी सीखा। उन्होंने आइरिश सिन फैन और अंग्रेजों के खिलाफ आजादी की कामयाब लड़ाई के बारे में सीखा। ये सब बहुत ही प्रेरक था।

हमें अक्सर शैक्षिक संस्थानों के बुनियादी ढांचों के बारे में बताया जाता है। इस अनूठे कॉलेज में ऐसा कुछ भी नहीं था। यहां तक कि उनके पास कोई पुस्तकालय भी नहीं था। अध्यापक अपने शिक्षार्थियों से सार्वजनिक पुस्तकालय से उधार ली कई किताबों में से सामग्री पढ़ने के लिए कहा करते थे। शैक्षिक संस्थानों में सबसे महत्वपूर्ण बात इनके अध्यापकों की गुणवत्ता होती है और इस मामले में पंजाबी कौमी विद्यापीठ में कोई कमी न थी। यहां के अध्यापक अपने-अपने क्षेत्रों में जाने-माने बौद्धिक थे और अपने शिक्षार्थियों के साथ काफी दोस्ताना संबंध व खुलापन रखते थे। भगत सिंह के प्राचार्य छबील दास (बख्शी 1988 : 22-23) अपने शिक्षार्थियों के साथ गरमाहट भरे संबंधों के बारे में लिख चुके हैं। वे बहुत सारी चीजों के बारे में बातचीत करते हुए चांदनी रातें नदी के किनारे गुजारते थे। जब छबील दास ने शादी की, तब भगत सिंह ने उनके सामने ही इस बात का विरोध किया और कहा कि शादी उनको अपनी जिंदगी में महत्वपूर्ण कामों को करने में अड़चन पैदा करेगी। छबील दास ने धीरज के साथ जवाब दिया कि ऐसी पत्नी का होना, जो सोचती हो और उनके साथ राजनीतिक और सांस्कृतिक हितों को भी साझा करती हो, वास्तव में उन्हें बहुत कुछ हासिल करने में सक्षम बनाएगा। उन्होंने सुनयात सेन और दूसरे विश्व नेताओं की पत्नियों का उदाहरण दिया। भगत सिंह कुछ देर चुप रह कर बोले, ''गुरूजी, आपको तर्क में कौन मात दे सकता है।'' ऐसे सीखने के माहौल में जो सीखने व बहस करने को बढ़ावा देता हो, उसने भगत सिंह जैसे दिमाग को विकसित होने में मदद की। उसी माहौल में एक 15-16 बरस के शिक्षार्थी के लिए यह मुमकिन हो पाया कि वह अपने प्राचार्य को इस बात के लिए राजी करने की कोशिश कर सके कि वे शादी न करें। उसी में यह भी मुमकिन हुआ कि उनके प्राचार्य भी संजीदगी व तर्क के साथ एक युवा छात्र को अपना जवाब दें। वहां पर एक ऐसे देश की संस्कृति विकसित की जा रही थी, जिसमें साहसिक सवाल और तार्किक विवेचना मुमकिन थी। यह आंख मूंद कर किया जाने वाला आज्ञा पालन नहीं था।

हम बार-बार यह सुनते रहते हैं कि भगत सिंह जबरदस्त पढ़ाकू थे। उनसे मिलने वाले लोग बताते हैं कि उनकी कुर्ते की जेबों में किताबें ठुंसी रहती थीं। अपनी जेल की कोठरी से आखिरी पत्रों में एक पत्र में वह अपने दोस्तों को लिखते हैं कि वह सार्वजनिक पुस्तकालय जा कर पांच किताबें निकाल लाएं और उनके मिलने आने वाले आगंतुक के हाथों

भिजवा दें। उनके बेहतरीन दिमाग की एक झलक हमें फांसी पर लटकाए जाने से दो महीने पहले लाला रामशरण दास की किताब *द ड्रीमलैंड* की भूमिका में भी नजर आती है। मैंने ऐसी भूमिका कभी नहीं पढ़ी। वह किताब के विषय-वस्तु की छानबीन करते हैं और कुछ बिंदुओं पर कहते हैं कि अगर इस लेखक के दिमाग में इन पंक्तियों को लिखते वक्त कुछ खास चीजें हैं, तो हम दोनों के मत एक ही हैं अन्यथा हमारे पक्ष जुदा-जुदा होंगे। भूमिका के अंत में वे कहते हैंः

> ''मैं एक चेतावनी के साथ खास तौर से युवाओं से इस किताब को पढ़ने की सिफारिश करता हूं। कृपया आंख मूंद कर इसका पालन न करें और जो इसमें लिखा है उसे बिना सोचे समझे न मान लें। इसे पढ़ें, इसकी समालोचना करें, इसके बारे में सोचें, और इसकी मदद से अपने विचारों को गढ़ने की कोशिश करें।''

उनके सहपाठी जयदेव गुप्ता ने लिखा है कि भगत सिंह ने 1923 में लाहौर छोड़ दिया था और अपने परिवार से आंशिक तौर पर संबंध तोड़ लिया था ताकि वे शादी के दबाव से मुक्त रह सकें। ऐसा लगता है कि वे पहले से ही अपना मन बना चुके थे कि उनकी जिंदगी आजादी की लड़ाई को समर्पित रहेगी। वे कानपुर चले गए, जो उस वक्त क्रांतिकारी गतिविधियों का एक महत्वपूर्ण केन्द्र था और वहां पर वे कांग्रेस समर्थित पत्रकार गणेश शंकर विद्यार्थी के इर्द-गिर्द बने समूह के सदस्य बन गए। जब वे मिले तब गणेश शंकर विद्यार्थी ने उनसे पूछा कि क्या वे इस राह में आने वाली सारी मुश्किलों के लिए और जरूरत पड़ने पर देश के लिए जान तक देने को तैयार हैं। विद्यार्थी ने 1931 में खुद भी यही किया था, जब कानपुर में दंगे हुए थे तब वे निर्दोष हिन्दुओं व मुसलमानों को बचाने के लिए दंगों में कूद पड़े थे। यह कहा जाता है कि भीड़ के द्वारा उनकी हत्या कर दिए जाने से पहले उन्होंने हजारों लोगों को बचाया था, जिनमें हिन्दु व मुसलमान दोनों ही थे। ऐसे इंसान को भगत सिंह ने कहा कि मैं हर मुश्किल के लिए तैयार हूं। उस वक्त वे 17 बरस के थे।

उन्होंने विद्यार्थी की प्रताप प्रेस में काम करना शुरू किया और जल्द ही युवाओं के एक जीवंत समूह के हिस्सा बन गए जिसमें चंद्रशेखर आजाद, बटुकेश्वर दत्त और कई दूसरे लोग शामिल थे। फिर उन्हें अलीगढ़ के पास स्थापित किए गए नेशनल स्कूल का प्रधानाध्यापक बनाया गया। इसी बीच में उनके परिवार ने उन्हें तलाश लिया और शायर हजरत मोहानी (''चुपके चुपके रात दिन आंसू बहाना याद है'' के रचियता) के जरिए उनसे दरखास्त की कि वे अपनी बीमार दादी की खातिर घर लौट आएं। वे लौटने को राजी हो गए और इसके साथ ही उन्होंने लाहौर व दूसरी जगहों से उनके हमख्याल लोगों द्वारा निकाली जा रही पत्रिकाओं में लिखना शुरू कर दिया। वे जबरदस्त लिक्खाड़ थे, खूब लिखते थे। प्रोफेसर चमन लाल और प्रोफेसर इरफान हबीब अभी भी उनके लिखे पत्रों व दस्तावेजों को खोज-खोज कर हमारे सामने लाते रहते हैं।

कानुपर के बाद वे अक्सर अपनी पहचान छुपाने के लिए बलवंत सिंह का नाम अपना लेते थे। कानपुर में ही वे हिंदुस्तान रिपब्लिक एसोसियशन के सदस्य बन गए थे। अपने कानपुर के अनुभव के साथ वे 1926 में लाहौर लौटे और वहां पर उन्होंने नौजवान भारत सभा की स्थापना की।

हम युवा भगत सिंह के विकास को देख कर समझ सकते हैं कि व्यक्ति अपने आप ही किसी मकसद के प्रति खुद को समर्पित नहीं कर देते। संस्थानों और संस्कृतियों की मौजूदगी के जरिए उनमें यह बदलाव होता है, जिसमें हजारों लोगों का योगदान होता है। जब हम ईमानदारी, साहस और प्रामाणिकता की जिंदगी जीते हैं, तब हम ऐसी संस्कृति में योगदान करते हैं, जो भगत सिंह जैसे व्यक्ति पैदा करती है।

भगत सिंह की राजनैतिक विचारधारा

जब तक भगत सिंह 21-22 बरस के हुए, तब तक उनकी राजनैतिक विचारधारा सामाजिक बराबरी और समतामूलक समाज के लिए संघर्ष करने की बन चुकी थी। वह ऐसे समाज को बनाने की बातें करने व उसके बारे में लिखने लगे थे जिसमें कोई भी अमीर और गरीब न हो। उनका मानना था कि क्रांतिकारी ताकतें समाज में किसानों और मजदूरों में ही बसती है। उनकी मदद हासिल करके ही इस समाज को बदला जा सकता है। उन्हें यह भी अच्छी तरह से पता

था कि इसे हासिल करना कोई आसान काम नहीं है। अब तक उन्होंने ''आदर्शवादी अहिंसा'' पर बातचीत करना शुरू कर दिया। कुछ चीजों के लिए वे मानते थे कि अहिंसा सबसे बेहतरीन तरीका है। लेकिन अगर आप गहरी जड़ें जमाए शोषण की प्रणाली को उखाड़ फेंकना चाहते हों, तब उनका मानना था कि हिंसा का जरूरी तौर पर इस्तेमाल किया जाना चाहिए।

हिंसा और बलिदान की संस्कृति

आज के वक्त में यह समझना मुश्किल हो जाता है कि कैसे एक युवा इंसान ऐसे रास्ते पर चलने के लिए प्रतिबद्ध हो जाता है, जिसके बारे में वह जानता है कि वह रास्ता मौत की तरफ ले जाएगा। भगत सिंह को दुर्घटनावश गिरफ्तार नहीं किया गया था। वह उनकी योजना का उसी तरह से हिस्सा था जिस तरह से अपने मकसद के अधिकतम प्रचार के लिए कोर्ट के कमरे का इस्तेमाल करना भी उनकी योजना का हिस्सा था। उन्होंने अपने दोस्तों से बाद में कहा था कि वे जिंदा रहने के बजाय अपनी मौत से ज्यादा हासिल कर पाएंगे। आज के वक्त में जब किसी भी युवा की जिंदगी बाजारवाद, अच्छी तनख्वाहें, मोबाइल फोन और ज्यादा से ज्यादा उपभोग करने और ज्यादा सनसनाती चीजों से जुड़ी रहती है, तब हमें यह समझने में मुश्किल होती है कि भगत सिंह का ऐसा उन्मुखीकरण कैसे हुआ होगा।

बलिदान और अनुशासन की संस्कृति उनके परिवार और पंजाबी कौमी विद्यापीठ की शिक्षा में रची बसी थी। भगत सिंह जीवन के उठान के दौर में कानपुर में एक ऐसी संस्कृति में डूबे हुए थे, जो खुले ढंग से हिंसा को राजनैतिक रणनीति के तौर पर बढ़ावा देती थी। हिंदुस्तानी रिपब्लिक एसोसियेशन और उसके नेता सचिन सान्याल के पास उसकी भूमिगत इकाई थी जो सक्रिय तौर पर हिंसक क्रांति की संस्कृति को बढ़ावा देती थी। ऐसा लगता है कि 1925 में हिंदुस्तान एसोसियेशन के नाम से लिखा गया पर्चा सचिन सान्याल ने ही लिखा था, जिसमें अराजक-आंतकवाद, उत्पीड़न के तमाम तंत्रों को नेस्तनाबूद करने के लिए रास्ते के तौर पर हिंसा का समर्थन किया गया था। अराजक-आतंकवाद एक राजनैतिक विचारधारा है, जिसने 19वीं सदी के अंत में यूरोप व अमेरिका में लोकप्रियता हासिल की थी। इसका बुनियादी विचार यह था कि हिंसा का नाटकीय स्वरूप जनता की जड़ता को तोड़ने के लिए जरूरी होता है। उनके विचार से यह विचारधारा उत्पीड़कों को कमजोर करती है और लोगों को एकजुट करती है। अराजक-आतंकवाद के सिद्धांत को हिदुस्तानी रिपब्लिक एसोसियेशन द्वारा सक्रिय तौर पर अपनाया गया और ऐसा लगता है कि इसी ने सांडर्स की हत्या और बाद में नेशनल लेजिस्लेएटिव एसेंबली में डाले गए बम को निर्देशित किया, जिसकी वजह से पहले भगत सिंह को कैद तथा बाद में फांसी की सजा हुई।

उनकी जिंदगी के दौरान राजनीति व हिंसा को लेकर उनके विचारों में आए बदलाव को हम देख सकते हैं। शुरुआती बरसों में हमें उनके लेखन में बलिदान और साहस को लेकर जुनून नजर आता है। लेकिन कोई व्यापक रणनीति या भविष्य के लिए कोई योजना नजर नहीं आती। यहां 19 बरस की उम्र में प्रताप में बब्बर अकालियों की तारीफ में लिखे गए एक लेख का एक अंश दिया गया है। वे अपने मन में एक ऐसे दृश्य की कल्पना करके वर्णन कर रहे हैं, जहां पर कुछ क्रांतिकारियों को पुलिस ने घेर लिया हैः

> ''हमने अपना सब कुछ देश की सेवा में कुर्बान कर दिया है। हम लड़ते हुए मर जाने की कसम खाते हैं लेकिन जेल नहीं जाएंगे।
>
> वह कैसा खूबसूरत व पवित्र नजारा होगा, जब अपने सारे पारिवारिक बंधनों व लगावों को छोड़ चुके लोग इस तरह की कसम खाते हैं! बलिदान का अंत क्या होता है? साहस और निडरता की सीमा कहां है? आदर्शवाद का शिखर कहां बसता है?''

उनके बाद के लेखन में उनकी ज्यादा परिपक्व हो चुकी नजर देखने को मिलती है। जेल में लिखे गए लेखों में वे लगातार इस बात पर जोर देते हैं कि वे हिंसा, बम और बंदूकों की संस्कृति में भरोसा नहीं करते हैं, इसके बजाय वे ठोस सामाजिक लक्ष्यों के बारे में लिखते हैं। वे शोषण और उत्पीड़न से उबरने की तमन्ना के बारे में बातचीत करते हैं।

वो युवा राजनैतिक कार्यकर्ताओं को एक संदेश लिखते हैं कि यह बंदूकों के लिए सही वक्त नहीं है। इसके बजाय वे यह सलाह देते हैं कि वे युवाओं का आंदोलन खड़ा करें और उसके जरिए एक क्रांतिकारी पार्टी खड़ी करें। वे कहते हैं कि समझौते किए जाने चाहिए और समझौते करना कोई ऐसी चीज नहीं है जिससे बचा जाए। वे दुनिया में हो रहे क्रांतिकारी आंदोलनों का उदाहरण देते हुए कहते हैं कि समझौतों के जरिए धीरे-धीरे आंदोलन गति पकड़ने लगते हैं। वे सोलह आने (उस वक्त एक रुपये में सोलह आने होते थे) की मांग करने और उसकी जगह एक आना मिलने का रूपक काम में लेते हैं। उन्होंने कहा कि हमें मिला हुआ एक आना अपनी जेब में रख लेना चाहिए और ज्यादा आने मांगने की तरफ कदम बढ़ा देने चाहिए। इसके बजाय नरमपंथी गलती यह करते हैं कि वे एक ही आना मांगते हैं और उन्हें वो भी नहीं मिलता है।

अब तब हिंसा के इस्तेमाल के बारे में भगत सिंह का एक अलग नजरिया बन चुका था। वे कहते हैं कि पहली और प्रमुख चीज एक राजनैतिक पार्टी का गठन है। उसकी सैन्य शाखा बनाना उसके बाद का काम है और यह राजनैतिक पार्टी की मदद के लिए होता है।

> ''मुझे अपनी पूरी ताकत से यह घोषणा करने दीजिये कि मैं आतंकवादी नहीं हूं और न ही कभी था, शायद अपने क्रांतिकारी कामकाज के शुरुआती जीवन के कुछ हिस्से को छोड़ कर। अब मुझे इस बात में पूरा यकीन है कि हम इन तरीकों से कुछ भी हासिल नहीं कर सकते... अगर किसी को मेरी बातों से गलतफहमी हो गई हो तो वे अपने विचारों को दुरुस्त कर लें। मेरे कहने का यह मतलब नहीं है कि बम और बंदूक बेकाम की चीजें हैं। लेकिन मेरे कहने का मतलब यह है कि सिर्फ बम फेंकना न सिर्फ फालतू का काम है बल्कि कभी-कभी यह नुकसानदायक भी होता है। पार्टी की सैन्य शाखा को किसी भी आपातकाल के लिए अपने पास मौजूद युद्ध सामग्री के साथ हमेशा तैयार रहना चाहिए। उसे पार्टी के राजनैतिक काम का समर्थन करना चाहिए। वह अकेले स्वतंत्र तौर पर न तो काम कर सकती है और न ही करना चाहिए।''

भगत सिंह की राष्ट्र की कल्पना

तो भगत सिंह किस किस्म के राष्ट्रवाद में यकीन करते थे और उस पर अमल करते थे? यहां पर इस बात को याद रखना जरूरी है कि राष्ट्रवाद एक संस्कृति होती है - इसमें मूल्यों, रवैयों और मान्यताओं का एक मिश्रण होता है। राष्ट्रवाद की अलग-अलग संस्कृतियां हो सकती हैं। भगत सिंह का राष्ट्रवाद गरीबों के साथ तथा शोषण को उखाड़ फैंकने के प्रति गहरी प्रतिबद्धता रखता है। वह पढ़ने और सोचने से ताल्लुक रखता है। उनके मुताबिक राष्ट्र की सेवा करने का मतलब ऐसे संगठनों का निर्माण करना है जो ऐसे समाज को जड़ से उखाड़ फैंकें जहां पर कुछ लोग बाकी सब लोगों को अपने पैर के अंगूठे के नीचे दबा कर रखते हैं।

इसकी तुलना दूसरी किस्म के राष्ट्रवादों के साथ करें। एक तरह का राष्ट्रवाद यह कहता है कि मैं अपने देश से मोहब्बत करता हूं लेकिन उसके लिए कुछ नहीं करूंगा। वह कहता है कि मैं तो सिर्फ अपना कॅरियर बनाऊंगा और दूर बैठ कर सिर्फ दूसरों के कामों की तारीफ करता रहूंगा। यह भगत सिंह का राष्ट्रवाद नहीं है। वे तो खुद आगे बढ़ कर देश के लिए काम करने के लिए कूद पड़ने वालों में से थे। एक दूसरे किस्म का राष्ट्रवाद है जो यह कहता है कि मैं अपने देश की पूजा करता हूं, मेरा देश अतीत में महान था और अभी भी महान है, मैं अपने देश के खिलाफ एक लफ्ज भी नहीं सुनूंगा। यह भी भगत सिंह मार्का राष्ट्रवाद नहीं है। वे तो सबसे पहले अपने देश की सामाजिक बुराइयों की आलोचना करते हैं। उनके लिए देशभक्ति का मतलब खुद की बुराइयों से आंखे मूंद लेना नहीं है, बल्कि उन्हें मिटाने की कोशिश करना है। इसके लिए वे दूसरे देशों से सीखने के लिए भी खुले हैं। एक और दूसरी किस्म का राष्ट्रवाद है जो यह कहता है कि धर्म देश की पहचान की बुनियाद होना चाहिए। वह इसे भी खारिज करते हैं। उनके लिए सभी धर्म राष्ट्र का ही एक हिस्सा हैं। और तो और, स्वतंत्रता के लिए दीर्घकालिक संघर्ष भी पूरी तरह से धर्म पर भावनात्मक निर्भरता से भागने का संघर्ष है। भगत सिंह का राष्ट्रवाद एक ऐसे समाज को बनाने की लड़ाई है, जिसमें न तो कोई

अमीर हो और न ही गरीब हो, जहां लोग साहस और स्पष्टता के साथ सोच विचार कर सकें, जहां किसी का भी शारीरिक व मानसिक उत्पीड़न न हो। उनके राष्ट्रवाद का ताल्लुक हिम्मत और स्पष्ट चिंतन की संस्कृति को गढ़ने से है।

आलोचना और मूल्यांकन

हम भगत सिंह के जीवन और विचारों से निकलने वाले शैक्षिक नतीजों की तरफ बढ़ें उससे पहले हमारे लिए यह पूछना भी बेहतर होगा कि क्या उनमें कोई खोट है। 23 बरस की उम्र में ही गुजर जाने वाले युवा भगत सिंह के बारे में ऐसी बहुत सी चीजें हैं जो उन्हें अनूठा बनाती हैं। फिर भी हमें उनकी नायक पूजा नहीं करनी चाहिए। हमें उनका भक्त नहीं बनना चाहिए जो उनके किसी भी विचार में कोई भी खोट ही न देख सके। उनमें भी कई तरह की समस्याएं हैं। आखिरकार वे भी अपने वक्त की ही पैदाइश थे। आज हम देख सकते हैं कि सामाजिक विषमता के बारे में उनका विश्लेषण बुनियादी तौर पर उस वक्त का मार्क्सवादी विश्लेषण था। इसकी कमजोरी यह है कि वह सामाजिक वर्गों और उनकी क्रांतिकारी संभावनाओं का सरलीकृत विश्लेषण है। उनके वैचारिक ढांचे में जाति की मौजूदगी बेहद ही कमजोर है। इसी तरह पितृसत्ता करीब-करीब गैर मौजूद ही है। राज्य का उनका सिद्धांत शास्त्रीय मार्क्सवादी पक्ष है जिसमें राज्य को पूंजीवादी वर्ग की कठपुतली माना जाता है। आज हम इतने सरलीकृत ढंग से नहीं सोचते हैं। इसके बावजूद उनके कामों व विचारों में बहुत कुछ ऐसा है जो अनूठा है। उन विचारों को हम चुन कर रख सकते हैं। इस एहतियात को बरतते हुए अब हम यह देखते हैं कि हम उनसे क्या सीख सकते हैं, जो आज के भारत की शिक्षा में बेहद काम का है।

शैक्षिक कार्यसूची यानी अजेंडा

भगत सिंह के विचारों से आज की शिक्षा के लिए कुछ नतीजे निकाले जा सकते हैं। लाला राम शरण दास की किताब *''ड्रीमलैंड''* के लिए लिखे गए उनके ''परिचय'' से पहला नतीजा यह निकाला जा सकता है, जिसमें वे हमें चेतावनी देते हैं कि भारत में बेहतर शिक्षा को बनाने का रास्ता राजनैतिक संघर्ष के साथ-साथ ही बनेगा। वे इस बात से सहमति रखते थे कि समता और न्याय पर आधारित नई दुनिया शिक्षा के जरिए मुमकिन है। लेकिन आप ऐसी शिक्षा प्रणाली कैसे बनाएंगे। उत्पीड़न और शोषण की दुनियावी प्रणालियां ऐसी संस्कृति या शिक्षा को उभरने का मौका ही नहीं देती। पहले उनका राजनैतिक तौर तरीकों (जिसमें सैन्य तौर तरीके भी शामिल होंगे) से विरोध करना होगा। सिर्फ उसके बाद ही लोगों के दिमागों को खोलने वाली व उन्हें प्रबुद्ध बनाने वाली शिक्षा को गढ़ पाना मुमकिन होगा।

हम उनसे दूसरी चीज यह सीख सकते हैं कि शिक्षा को उत्पीड़न या दमन से मुक्ति करने वाला होना चाहिए। उसे स्पष्ट तरीके से चिंतन करना तथा साहस सिखाना चाहिए। उसे लोगों को शोषण की बेड़ियों से मुक्त करना चाहिए और सोचने के पेचीदा तरीके सिखाने चाहिए। एक शब्द में कहें तो उसे मुक्तिदायी शिक्षा होना चाहिए। यहां हम देख सकते हैं कि भगत सिंह पॉउलो फ्रेरे और ज्योतिबा फुले की ही परंपरा से आते हैं, वह हमें ऐसी चीज करने के लिए कह रहे हैं, जिसे हम आज आलोचनात्मक शिक्षाशास्त्र कहते हैं।

हालांकि आजकल के विद्यालय पाठ्चर्या तथा शिक्षाशास्त्रीय अभ्यासों में यह चीज बमुश्किल ही दिखलाई पड़ती है। मैं अपनी बात को सामाजिक अध्ययन की पाठ्यपुस्तकों में कुछ अच्छा और कुछ साधारण से उदाहरण लेकर समझाता हूं। जब हम उन्हें देखें तो हमें यह नहीं देखना चाहिए कि उसमें भगत सिंह का फोटो है या नहीं। इसके बजाय हमें यह देखना चाहिए कि उसमें दिमाग को मुक्त करने तथा सामाजिक गैरबराबरी से उबरने के लिए, मुक्ति पर जोर है या नहीं। 2005 की राष्ट्रीय पाठ्यचर्या के बाद एनसीईआरटी द्वारा और एकलव्य तथा केरल तथा छत्तीसगढ़ द्वारा बनाई पाठ्यपुस्तकें संभवतः भगत सिंह के राष्ट्रवाद के सबसे करीब हैं। एनसीईआरटी की कक्षा 8 की सामाजिक व राजनैतिक जीवन वाली पाठ्यपुस्तकों से एक उदाहरण लेते हैं। उसमें एक पाठ समानता पर है, जो जल्द ही होने वाले राष्ट्रीय संसद के चुनावों के मद्देनजर बेहद प्रासंगिक है। यह पाठ इस बात की खुशी मनाता है कि चुनावों में वोट देते वक्त

एक लाइन में खड़े हम सब बराबर है। लेकिन इसके साथ ही यह इस बात की तरफ भी बच्चों का ध्यान खींचता है कि वोट की लाइन के अलावा बाहर की जिंदगी में हमें ढेर सी गैर बराबरी का सामना करना पड़ता है। चित्र में दिखाई गई औरत के पास अपने बीमार बच्चे को डॉक्टर के पास ले जाने के लिए शाम तक इंतजार करने के अलावा कोई विकल्प नहीं है, क्योंकि वह तब तक ही काम पूरा करके अपने घर लौटती है। बीमारी के कारण उसके सामने बहुत साफ हैं - कच्ची बस्ती में जीने के अस्वास्थ्यकर हालात। और फिर भी उसकी लाचारी है, क्योंकि वह यह कल्पना नहीं कर सकती है कि इन हालातों को ठीक करने के लिए वह क्या कर सकती है। यहां पर इस पाठ्यपुस्तक में हम एक नजरिया देख सकते हैं जो भगत सिंह के विचारों से मेल खाता है। वह हमारा ध्यान हमारे समाज में मौजूद गैर बराबरियों की तरफ खींचता है और एक जरूरी लहजे में हमसे पूछता है कि हम इनके बारे में क्या कर सकते हैं।

इस पर ध्यान देना भी जरूरी है कि एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकें कक्षा 10 तक भगत सिंह के बारे में बात नहीं करती हैं। उनके मूल्यों को साझा करने के लिए उनकी बात करना जरूरी भी नहीं है। और फिर भी हम पाते हैं कि बहुत से विद्यालयों में भगत सिंह पर नाच व गाना होता है, लेकिन वे इस बात को नहीं समझते कि भगत सिंह आखिर क्या कह व कर रहे थे। इसके साथ ही एक दूसरी तस्वीर है जो एक राज्य की पाठ्यपुस्तक से ली गई है और जिसमें भगत सिंह के बारे में बात की गई है, लेकिन उसमें ऐसे पंडिताऊ लहजे में वर्णन किया गया है कि बच्चा समझ ही नहीं पाएगा कि भगत सिंह किसके लिए जिए और किसके लिए मरे। भगत सिंह की विचारधारा को बहुत ही संक्षिप्त व सटीक भाषा में व्यक्त किया गया है। लेकिन उसका कुछ खास फायदा नहीं है क्योंकि दरअसल ज्यादातर विषयवस्तु व शिक्षाशास्त्र उसका उलट है।

भगत सिंह से जुड़े गीतों के बारे में मुझे हमेशा इस बात का अफसोस होता है कि हम जिस तरह से उन्हें गाते हैं और याद रखते हैं वह भगत सिंह की हिंसा और उनके शुरुआती दिनों की उनकी बलिदान की संस्कृति है। हम उनके तर्काधारित विवेकवाद यानी रेशनलिज्म, सामाजिक बराबरी के प्रति उनकी प्रतिबद्धता और उनके ज्ञान के फैलाव के प्रति उनके लगाव को भूल जाते हैं।

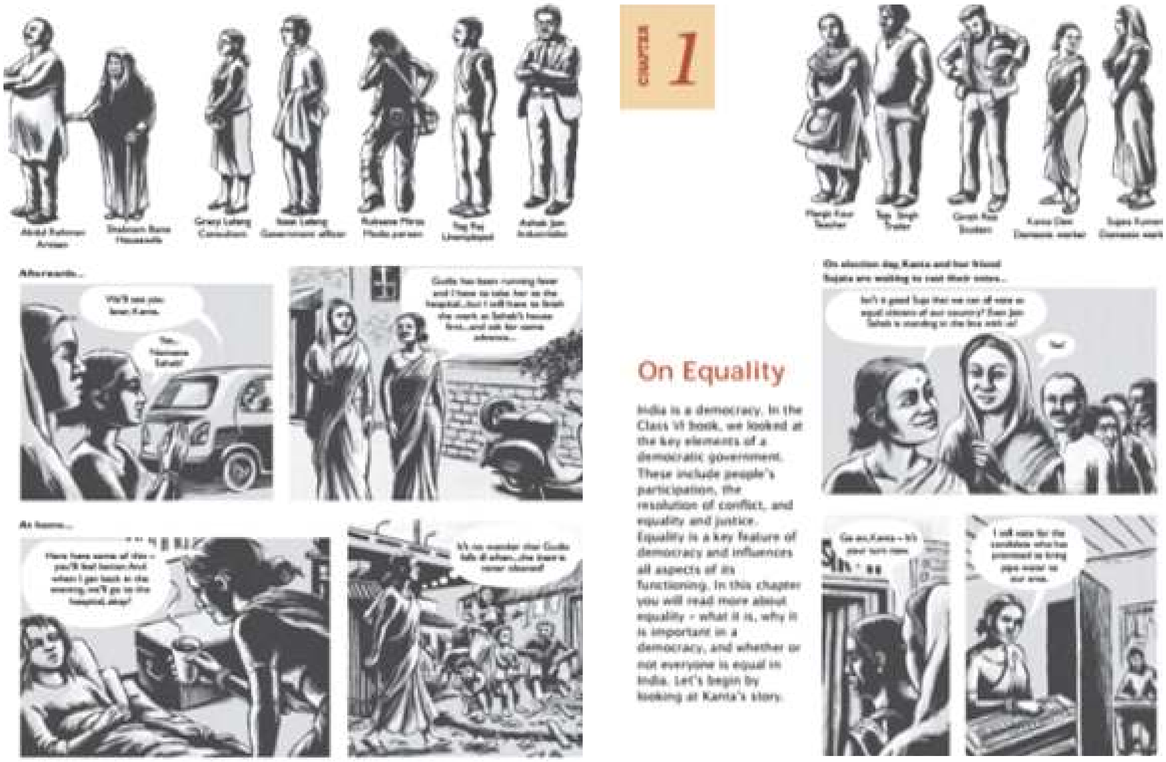

hanged. But Chandrashekhar Azad managed to escape.

Hindustan Socialist Republican Association : The young men influenced by socialist ideas decided to set up a nation wide revolutionary organisation. Prominent among them were Chandrashekhar Azad, Bhagat Singh, Rajguru, Sukhdev etc. All these revolutionaries were secular in their thoughts. In 1928 in the meeting held at Feroz Shah Kotla ground in Delhi, these young men established the organisation called 'Hindustan Socialist Republican Association'.

Bhagat Singh

The objective behind the establishment of this organisation was to free India from British exploitation. It also wanted to overthrow the unjust socio-economic system which exploited the farmers and workers. Bhagat Singh gave importance to creation of a society based on social justice and equality.

The work of gathering arms and execution of programmes was entrusted to a seperate wing of the organisation. This wing was called 'Hindustan Socialist Republican Army' and Chandrashekar Azad was the chief of this wing.

Rajguru

Sukhdev

Members of this organisation carried out many revolutionary activities. Bhagat Singh and Rajguru fired bullets and killed an officer named Saunders in order to avenge the death of Lala Lajpat Rai.

The Government had introduced two bills in the Central Legislative Assembly, curtailing civil rights. To protest it, Bhagat Singh and Batukeshwar Dutta threw bombs in the Central Legislative Assembly.

The British Government immediately raided the centres of 'Hindustan Socialist Republican Army'. Through it the police also obtained clues related to the killing of Saunders. The government started arresting the revolutionaries. They were tried under the charge of sedition. On 23 March 1931, Bhagat Singh, Rajguru and Sukhdev were hanged in the Lahore jail. But till the end Chandrashekhar Azad did not fall into the hands of the police. Later he died in an encounter with police at Alfred Park in Allahabad.

Attack on Chittagong Armoury : Surya Sen was the chief of the revolutionary group at Chittagong in Bengal. He had gathered around him revolutionaries like Anant Singh, Ganesh Ghosh, Kalpana Dutta, Pritilata Waddedar. With their assistance, Surya Sen drew up a plan to attack the armoury at Chittagong. As per the plan, on 18 April 1930 the revolutionaries seized the arms from the two armouries in Chittagong. The telephone and telegraph lines were broken and they succeeded in paralysing the communication system. After that they gave a thrilling fight to the British army.

Surya Sen

On 16 February 1933, Surya Sen and

जब हम यह देखते हैं कि इस देश ने भगत सिंह के बारे में क्या याद रखा है और उनका असली मकसद क्या था, तब हम गालिब के इस शेर को दोहरा सकते हैं, जिसके बारे में यह मशहूर है कि वह भगत सिंह का भी बेहद पसंदीदा शेर था :

या रब वो न समझे हैं न समझेंगे मेरी बात
दे और दिल उनको जो न दे मुझको ज़ुबां और ◆

(सालाना शहादत दिवस पर अजीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बेंगलुरू में दिए गए व्याख्यान की लिखित प्रस्तुति, 29 मार्च, 2019); https://youtu.be/MDwqMvtDQbo)

लेखक परिचय : जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली से एमफिल एवं पीएचडी करने के बाद एकलव्य, होशंगाबाद के साथ लगभग 3 वर्ष तक कार्य किया। इसके उपरान्त आईआईटी, कानपुर में समाजशास्त्र का अध्यापन किया। वर्तमान में अजीम प्रेमजी यूनीवर्सिटी, बैंगलोर में समाजशास्त्र के प्रोफेसर हैं।

संपर्कः amman.madan@apu.edu.in

संदर्भ

भगत सिंह के सभी उद्धरण : गुप्ता, डी.एन., सं. 2010, भगत सिंह : सलेक्टेड स्पीचेज एंड राईटिंग्स। नई दिल्लीः नेशनल बुक ट्रस्ट।

अंबेडकर, बी. आर. (1989). रानाडे, गांधी और जिन्ना. वी मून (संस्करण), डा. बालासाहेब अंबेडकर : लेखन और भाषण (भाग-1, पृ. सं. 211-240). मुंबई : शिक्षा विभाग, महाराष्ट्र सरकार। (1943 में प्रकाशित मूल काम)

बख्शी, एस.आर.1988. रिवोल्यूशनरीज एंड द ब्रिटिश राज। नई दिल्ली : एटलांटिक पब्लिशर्स एंड ड्रिस्ट्रीब्यूरटर्स

Madan, Amman. 2019. “Bhagat Singh’s Version of Nationalism and What It May Mean for Indian Education.” The New Leam, June 4, 2019.

http://thenewleam.com/2019/04/bhagat-singhs-version-of-nationalism-and-what-it-may-mean-for-indian-education